Legal Express: An International Journal of Law **ISSN 2394-465X**
Vol.VI, Issue-III September 2020

इस्लामिक विधि के अंतर्गत विधि के स्त्रोत

डॉ. सुहैल अज़ीम कुरैशी*

सार

यह शोध लेख "इस्लामिक विधि" के स्त्रोत के संबंध में है। इसका लक्ष्य "इस्लामिक चिंतन" की कुछ प्रचलित अवधारणाओं और विभिन्न अनुशासनों तथा आज इस्लाम के चलन को आकार देने वाले अभी मतों से परिचित कराना है। यह भली-भांति ज्ञात है कि कुल चार मुस्लिम विचार धाराएं प्रमुख हैं, फिर भी प्रत्येक की अपनी अपनी व्याख्या में भिन्न है प्राथमिक (मूल) स्त्रोत, जो सभी मुस्लिमों द्वारा सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत हैं, वे हैं - "कुरान" और "सुन्नाह"। फिर भी चलन में जहां पर ये मौन है वहां पर दूसरे स्त्रोत प्रयोग में लिए जाते हैं इस प्रकार "इज्मा" (विद्वानों के अभिमत का अंतःकरण) और "कयास" (तुलनात्मक निगमन के माध्यम से अस्तित्व में आई विधि) भी के स्त्रोत हैं इसके अलावा द्वितीय (गौण) स्त्रोतों के अंतर्गत "रिवाज" अथवा "रूढ़ी" उर्फ; न्याय विनिश्चय विधायन, न्याय, साम्या, सदविवेक भी इस्लामिक विधि के स्त्रोत समझे जाते हैं।

परिचय

इस्लामिक विधि के अंतर्गत शब्द "स्त्रोत" से शुरुआत करते हुए यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह सकारात्मक विधि से अलग नहीं है। आठवीं शताब्दी में इस्लामिक विचारकों के मध्य प्रचलित दो विचारधाराओं के विधिक अधिगम को लेकर मतभेद पैदा हुआ परंपरावादी (अहल-अल-हदीस) पूर्णतः "कुरान" और पैगंबर से ज्ञात परंपराओं "सुन्नाह" को ही न्यायशास्त्र का वास्तविक स्त्रोत मानते थे जो कि मदीना से उत्पन्न हुआ गैर-परंपरागत सोच (अहल-अल-रे) वाले विश्वस्त अहादीस की अनुपस्थिति में 'तर्कों' और 'चिंतन' से मुक्त उपयोग पर विश्वास करते थे यह विचारधारा ईराक से उत्पन्न हुई।

तकनीक में अंतर इस कारण से है कि क्योंकि पैगंबर अपने जीवन के दस वर्ष मदीना में रहे। अतः वहां अहादीस का एक विश्वसनीय स्त्रोत था जिस पर विद्वान निर्भर कर सकते थे। जबकि दूसरी ओर गैर-परंपरागत विधिवेत्ताओं को अवधारणाओं पर निर्भर करना था, क्योंकि इराक में विश्वसनीय स्त्रोत नहीं थे, अतः विधिवेत्ताओं को यह निश्चिय करना था कि पैगंबर के कौन से कृत्य और निर्णय धार्मिक रूप से बाध्यकारी थे, और कौन से उनके व्यक्तिगत विवेक के कृत्य मात्र थे

आमतौर से परंपरावादियों ने संभावनाओं के आधार पर पैगंबर के निर्णय को 'विधायकी पहचान' के रूप में अधिक मान्यता दी, जबकि अन्य विचारधारा ने पैगंबर द्वारा अपने जीवन में निभाई गई विभिन्न भूमिकाओं के मध्य भूमिकाओं में अंतर (भेद) किया।

हम अगर शोध पद्धति का उपयोग इस्लामिक विधिक शोध में करें तो हमें इस्लामिक विधि के स्त्रोतों को दो प्रमुख भागों में विभाजित करते हैं-

* प्राचार्य, चौधरी दिलीप सिंह विधि महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.), पूर्व प्राचार्य, गुरुकुल विधि महाविद्यालय, गुना (म.प्र.)

(अ) प्रधान स्रोत या प्राथमिक स्रोत

(ब) गौण स्रोत,

प्रधान स्रोत या प्राथमिक स्रोत- जो स्रोत सीधे 'समस्याओं के हल' से जुड़े हो उन्हें प्रधान या प्राथमिक स्रोत कहते हैं इस्लामी विधि के प्रधान स्रोत वे पुरातन स्रोत हैं जिन्हें यह माना जाता है कि पैगंबर मुहम्मद (स.) ने विधि के स्रोतों के रूप में स्थापित कर दिया था। और यह शोध विचारधारा एवं पुस्तकों के प्रमाणों से प्राप्त हुआ है कि –

'अल-कुरान' और 'सुन्नाह' ही प्रधान स्रोत हैं।

इस पर इमरान अहसन खान नियाजी का मत भी है कि- प्रधान स्रोत केवल 'कुरान' और 'सुन्नाह' को ही माना जाता है इसके अलावा 'इज्मा' को भी इस्लाम विधि के स्रोत के जैसे मान्यता दी जाती है, परंतु जब 'इज्मा' से किसी मसले का हल दिखाई नहीं देता तो हमें वापस 'कुरान' और 'सुन्नाह' की ओर आना होता है, इसलिए विधिवेत्ताओं के मतानुसार 'कुरान' और 'सुन्नाह' ही प्रधान स्रोत है।

एक बार की बात है कि पैगंबर मोहम्मद का एक परंपरा (सुन्नाह) के अनुसार उन्होंने अपने एक सहयोगी से प्रश्न पूछा कि- "किसी वाद में यह अपना निर्णय किस आधार पर देगा?" इसके उत्तर में ने कहा- सर्वप्रथम अपना निर्णय अल्लाह के शब्दों के आधार पर देगा (कुरान); ऐसा संभव न होने की दशा में निर्णय का आधार आपकी (मुहम्मद स.) अनुसरण की गई।[1]

परंपराओं (सुन्नाह) होगी और यदि यहां भी संभव न हुआ तो, 'वाद का निर्णय' वह अपने स्वयं के विवेक के आधार पर देगा कहा जाता है कि यह उत्तर सुनकर पैगंबर साहब संतुष्ट हुए और उपर्युक्त स्रोतों को इसी क्रमानुसार मान्य बताया।

इस आधार पर इस्लामिक विधि के स्रोतों का क्रम निम्न है-

अल कुरान- कुरान में निहित अल्लाह के संदेश

सुन्नत और अहदिस (हदीस)- पैगंबर साहब का सुन्नाह (परंपराएं/व्यवहार/आचरण)

क्यास- मानव तर्क या विवेक

परंतु इस्लामिक विधि के विकास के साथ ही

इज्मा- मतैक्य निर्णय को भी प्रमाणिक स्रोतों में स्थान मिला। जब किसी नई समस्या के समाधान के लिए कुरान तथा (सुन्नाह) में कोई नियम ना होने की दशा में विधिवेत्ताओं के 'मतैक्य निर्णय' द्वारा नया कानून प्राप्त कर लिया जाता (बना लिया जाता) था।

अब्दुर्रहीम के कथनानुसार- किसी समय के मुस्लिम विधि शास्त्रियों द्वारा किसी विशिष्ट विषय पर दी गई सहमति ही इज्मा है।[2]

अतः इस्लामिक विधि के प्रधान स्रोतों के अंतर्गत-

1. अल-कुरान
2. सुन्ना या हदीस
3. इज्मा

---

[1] इमरान खान नियाजी इस्लामिक जुरिस्प्रुदेंस पृष्ट- 156

[2] अब्दुर्रहीम: मुहम्मडन ज्युरिसप्रूडेंस पृष्ट 115

4. कयास आते हैं[3]

मुस्लिम विधिवेत्ताओं द्वारा एक विवाद्यक की वैधानिकता का पता लगाने में, ये संपूर्ण स्रोत निम्न क्रम में ही प्रयोग में लाए गए। यदि वैधानिकता 'कुरान' के सुस्पष्ट आदेश पर आधारित नहीं तब विधिवेत्ता 'हदीस' के सुस्पष्ट आदेश की ओर झुके।

कुरान इस्लाम का धार्मिक मूल पाठ है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह ईश्वर का कथन है जो पैगम्बर मोहम्मद साहब के माध्यम से संप्रेषित हुआ है।

सुन्नाह को धार्मिक कृत्य, संदर्भ और इस्लामी पैगम्बर मोहम्मद साहब के द्वारा पुष्ट समझा जाता है जो कि उनके साथियों और शिया इमामों द्वारा वर्णित है।

कुरान और सुन्नाह में कार्यावाहियों/कृत्यों का स्पष्टतः वर्णन है, जिन्हें मुस्लिमों को पालन करना चाहिए।

1. *अल-कुरान* "अल कुरान" एक ऐसी पवित्र किताब है जो कि अल्लाह ने पैगम्बर मोहम्मद साहब को दिए गए रहस्यमय संदेशों से पर्दा उठाती है। यह सर्वोच्च और सर्वात्रिक प्रमाणिक विधि है।

'कुरान' शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के 'कुर्री' शब्द से हुई है, इसका शाब्दिक अर्थ- 'पढ़ना' या 'पाठ करना' अथवा जो 'पढ़ा जाना चाहिए'[4]

इस्लाम के मानने वाले (मुस्लिम) लोगों का ऐसा विश्वास है कि कुरान एक पवित्र (देव-मूल) की पुस्तक है जो पैगम्बर मोहम्मद साहब के माध्यम से जनहित के लिए अवतरित हुई है।

मुस्लिम यह भी विश्वास करते हैं कि 'कुरान' अल्लाह का अंतिम रह्स्योद्घाटन है, अर्थात ईश्वर का वास्तविक कथन है, जिसे हजरत मोहम्मद द्वारा अपने जीवन के दौरान संरक्षित किया गया और लिखा गया और उनके निधन के तत्काल बाद इसे संकलित किया गया।

काल गणना तथा महत्व; दोनों की दृष्टि से 'कुरान' इस्लामिक विधि का सर्वप्रथम स्रोत इसलिए भी है क्योंकि 'कुरान' से ही वर्तमान मुस्लिम- समाज का उदय हुआ है।[5]

दूसरे विधिवेत्ताओं के मतानुसार कुरान में अल्लाह के वह संदेश है जो जिब्राइल नामक फरिश्ते ने पैगम्बर मोहम्मद साहब को दिए, अरबी भाषा में दर्ज हैं।

कुछ विधिवेत्ता ओं ने इसे 'अरबी भाषा से पर्दा' उठाना भी कहा है। और कुछ ने इसे अल्लाह के चमत्कारी संदेशों से पर्दा उठाना बोला है।[6]

---

[3] अली, मोहम्मद मुमताज अली (1995), Conceptual and Methodological issue in Islamic research: A Few Milestone P. 204-205 (Hindi Translation)

[4] जॉन डेविड फोर्ट मोहम्मद एंड टीचिंग ऑफ कुरान संख्या 111 पृष्ट 105

[5] यद्यपि पैगंबर साहब का कहना था- कि इस्लाम कोई नया धर्म नहीं है यह तो पहाड़ियों की भांति पुरातन है। (फैजी: आउटलाइंस ऑफ मुहम्मडन लॉ संख्या IV पृष्ठ 12)

[6] इमरान अहसन खान मियांजी, इस्लामिक ज्युरिस्प्रूडेंस पृष्ठ 183

मुस्लिम विधिवेत्ता, भी इससे सहमत हैं कि कुरान अपने आप में एक विधिक संहिता नहीं है, वरन इसका उद्देश्य एक "जीवन पद्धति" की स्थापना करना है, जो मनुष्य के अन्य लोगों तथा ईश्वर से संबंध को नियमित करती है। कुरान के पथ तीन क्षेत्रों में वर्गीकृत हैं:-

1. धर्म विज्ञान के आकलन या अनुमान लगाने का विज्ञान,
2. नीति शास्त्र के सिद्धांत और
3. मानवीय आचरण के नियम

इस्लाम के मानने वालों का या विश्वास है कि 'कुरान' अल्लाह का अंतिम शब्द है कुरान में कुल 114 (सुराह) अध्याय हैं और लगभग 6666 हैं, जिसमें से लगभग दो सौ आयतें विधिक सिद्धांतों से संबंधित है। विधि से संबंधित आयतों में से लगभग, 80 आयतें पारिवारिक विधि से संबंधित हैं।[7]

शरिया में "इस्लामिक विधि" की स्थापना की गई है, जो कुरान की आयतों से ही निकली है। कुरान की सामग्री की अधिकांश रचना मुख्यत: व्यापक सामान्य नैतिक निर्देशों से हुई है, जिससे यह ज्ञात होता है कि, इस्लामिक धार्मिक सिद्धांतों और मुस्लिम के क्या उद्देश्य और आकांक्षा होना चाहिए।

कुरान के अर्थों के निर्वचन के लिए जिस सर्वाधिक महत्वपूर्ण सहायता का उपयोग किया जाता है, वह है 'हदीस'- इस्लामिक परंपराओं का संग्रह, जिसमें आरंभिक इस्लामिक इतिहास की जानकारी विकसित की गई है।

इस्लामिक विधि का आधार शरिया, कुरान की आयतों से विकसित हुई है। कुरान में, मुख्यत: सामान्य नैतिक निर्देश, जिनमें मुस्लिम के उद्देश्य ध्येय हैं, सम्मिलित है। निश्चित ही, चूँकि निर्देश इतनी व्यापक जानकारी उपलब्ध कराते हैं, अतः निर्वचन की आवश्यकता महत्वपूर्ण हो जाती है। यहां (यह उल्लेखनीय है कि) कुरान के अनेकों भिन्न-भिन्न निर्वचन हैं, जो व्यापक रूप से पढ़े जाने और श्रद्धा रखे जाने योग्य हैं।

इस्लामिक विचारक अब्दुल-अ-आला मौद्दी ने कहा कि, एक सहमत निर्वचन से किसी आदेश का पता लगाना बहुत कठिन है। तथापि, कुरान की विश्वसनीयता पर भी मुस्लिम विद्वान या संस्था द्वारा कभी भी प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया गया।

कुरान और मूल पाठ के संबंध में

आलोचकों ने इस्लाम के आरंभ और मूल पाठ के विकास और प्रतिलेखन विवादों की साक्ष्य पता लगाने का प्रयास किया, किंतु परिणाम अल्प रहे। क्योंकि कुरान का प्रत्यक्ष और अभ्रष्ट "दिव्य मूल" होना इस्लाम का मूल तत्व है। निश्चित ही यह ऐसा विश्वास करने के लिए आधार देते हैं कि, कुरान में न तो त्रुटिया हैं ना ही विखराव है।("यह एक ऐसी किताब है, जिस पर कोई संदेह नहीं है, जो इसके विश्वासकर्ताओं के लिए एक मार्गदर्शक है": सूरत-अल-बकराह आयत 2) फिर भी यह सुज्ञात है कि विशिष्ट कालक्रम विज्ञान की दृष्टि से, बाद के आयतों को हटाकर दूसरों को स्वायित करते हैं।

[7] अहमद अकील: मुस्लिम विधि,(2012) पृष्ठ 09

उदाहरण के तौर पर शराब पर प्रतिबंध, तत्काल के बजाय शनै: शनै: स्वायित हुआ। कई विद्वानों ने तर्क दिया कि कुछ आयतें, कुछ अभ्यासों को हतोत्साहित करते हैं। (उदाहरण के लिए – बहुविवाह)

इन पर प्रतिबंध लगाए बिना, समग्र को एक जैसी प्रक्रिया के भाग के रूप में समझा जाना चाहिए, जबकि अन्य का तर्क है यह विषमता-"इस दिन में, मैंने आपके लिए आपके धर्म को सर्वांगपूर्ण क्रिया, इससे आप पर मेरा पक्ष पूर्ण हुआ और आपके लिए, आपका धर्म इस्लाम हुआ" (5:3)

कुरान के आधारभूत संदेश के रूप में, यह तीन मूलभूत बिंदु है, जिसे इसके दौरान कई बार दोहराया व उल्लेखित किया गया है। जो उल्लिखित है; यह दर्शाते हैं कि भौतिक जीवन एक परिक्षण है, पश्चातवर्ती जीवन निश्चित है, वर्तमान जीवन में हमारे कार्य के परिणाम अगले (जीवन) में प्राप्त होते हैं।

सुन्ना

सुन्ना इस्लामिक विधि का द्वितीय स्रोत है। यह एक अरबी शब्द है, जिसका अर्थ है 'प्रक्रिया'। पैगम्बर मोहम्मद साहब द्वारा उन्होंने जो कुछ कहा, किया, और जिससे सहमत थे, का प्रतिनिधित्व करने वाली विधिक शब्दावली के रूप में लागू किया गया। कुरान में कहा है:- "आपके लिए पैगम्बर मोहम्मद साहब का जीवन, व्यवहार का एक प्रतिमान है"। (अल कुरान 33:21)

पैगम्बर मोहम्मद साहब की परंपराओं को सुन्ना अथवा अहदिस कहा जाता है। हादिस के प्रमुख तत्व है कि, यह मोहम्मद साहब के आचरणों का संग्रह है जो उन्होंने किया या नहीं किया।

पैगम्बर के साथियों द्वारा परंपराओं की कई पुस्तकें संकलित की गई है। बाद में ये बुखारी, मुस्लिम के हदीस अर्थात परंपराओं के महान संग्रह के रूप में लागू हुई। परंपराओं के संग्रहकारों ने परंपराओं के संग्रह में बहुत वैज्ञानिक प्रणाली अपनाई। उन्होंने कोई परंपरा अभिलिखित नहीं की, सिवाय, कृतांत-कर्ताओं की कड़ी के प्रत्येक परंपरा में उसके अंतिम व्याख्याकार का नाम है, जिससे कि उन्होंने वह परंपरा सीखी, और जो पैगम्बर या पैगम्बर के साथी के पीछे थी। सुन्नार जो कि विश्वस्त व्याख्याकारों द्वारा स्थापित है, पूर्णत: एक विधिक तत्व के रूप में निर्भर किए जाने योग्य हैं।

पैगम्बर के सुन्नाह का अर्थ सामान्यतः परंपराएं हैं, और इसमें अग्रलिखित तीन वर्ग संकलित है।

1. पैगम्बर साहब के आदेश
2. उनके कृत्य
3. वे विशिष्ट कार्य जिन्हें उनकी मौन या ध्वनित स्वीकृत प्राप्त है, और जो उनके ज्ञान में थे।

पैगम्बर साहब के उपदेशों और कृत्यों के अभिलेख 'अहादिस' में है जो यह कहता है कि ये अधिकृत संकलनों में अंतिम रूप से संकलित किए जाने के पूर्व पैगम्बर के निधन के दशकों वाद अभिलिखित हैं।

मोहम्मद साहब ने जीवन के बारे में कुरान की शिक्षाएं अपने निर्वचनों और (इनके) कार्यान्वयन द्वारा दी।

'कुरान' और 'सुन्नाह' एक दूसरे के पूरक हैं। कुरान प्रकृति से सामान्य है, सुन्नाह इसे विशिष्ट और विस्तार पूर्ण बनाती है सुन्नाह कुरान के निर्देशों का वर्णन करती है। सुन्ना आवश्यक तत्व और विस्तृत विवरण उपलब्ध कराकर इसे सुस्पष्ट करती है।

'इज्मा' और 'कयास' कुरान और सुन्ना से अपना मूल्य और अधिकारिता प्राप्त करती है, इसलिए इन्हें निर्भर स्रोत भी कहा जाता है

इज्मा

इस्लाम में विधि का प्रधान स्रोत के अंतर्गत, विधि का तीसरा स्रोत 'इज्मा' या 'विद्वानों का विवेक' है, जो मुस्लिम समुदाय के लिए प्रतिनिधि विधायी के महत्व की पहचान करते हैं। मुस्लिम समाज एक ऐसी विधि निर्मात्री शक्ति चाहता है, जो इस्लामिक शरिया (इस्लामिक विधि) को लागू करें।
इज्मा एक विशिष्ट अवधि में, धार्मिक मामलों को तकनीकी रूप से विधिवेक्ताओं के विवेक को परिभाषित करता है। इज्मा का अर्थ है कि 'विचारों का मतैक्य' सामान्यत: इसके दो अर्थ होते हैं।

'किसी मामले पर एकमत होना' हालांकि, तकनीकी अर्थ में इज्मा विधिवेत्ताओं के विचारों का मतैक्य स्वतंत्र रूप से होना है।

इज्मा की कार्रवाई के लिए समुचित साक्ष्य माना जाता है, क्योंकि इस्लाम में पैगम्बर ने कहा कि - अल्लाह अपने बंदों (लोगों) को कभी भी किसी गलत मामले पर सहमत नहीं होने देंगे।

इस प्रकार इस्लाम के विद्वानों में, धार्मिक मामलों पर सहमति है कि, यह इस्लाम में विधि का स्रोत है।[8]

इज्मा एक सर्वसम्मत समझौता (सहमति) है इस्लामिक विधि के विकास में इस स्त्रोत का प्रमुख स्थान रहा है क्योंकि इज्मा के द्वारा ही सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप नये कानून बनाना संभव था।

इज्मा का सृजन

प्रत्येक मुस्लिम 'इज्मा के सृजन' में भाग लेने योग्य नहीं माना गया, केवल मुजतहिद विधिवेत्ताओं ही इज्मा के सर्जन में भाग ले सकते थे। वे अपने मतैक्य सहमति द्वारा इच्छित नियम बना सकते थे। मुजतहिद होने की आवश्यक योग्यताएँ होती थी।

1. मुस्लिम होना चाहिए,
2. उन्हें फिकह अथवा कानून का ज्ञान हो।
3. उनमें स्वतंत्र निर्णय लेने एवं देने की क्षमता रखता हो।

इस प्रकार की योग्यताओं वाले चुने हुए 'मुजतहिद' ही एकमत होकर निर्णय दिया करते थे। इज्मा के सृजन की पूरी प्रक्रिया इसे 'इजतिहाद' कहलाती थी।

लेकिन मुजतहिदों का सम्मिलित निर्णय निराधार नहीं रहता था। दूसरे शब्दों में, विधिशास्त्रियों का यह निर्णय स्वतंत्र नहीं रहता था, यह कुरान या सुन्ना के किसी न किसी पूर्व परिचित सिद्धांत पर आधारित रहता था।

जब कभी कुरान और सुन्ना दोनों में से कोई मार्गदर्शन सीधे उपलब्ध नहीं हैं तब विधिवेत्ताओं ने अपने तर्क (इजतिहाद) को एक तर्क के रूप में प्रस्तुत किया।

[8] कमाली हासिम : इस्लामिक न्यायशास्त्रके सिद्धांत

समय गुजरते एक निर्वचन को ज्यादा से ज्यादा विधि ज्ञाताओं / शोधार्थियों द्वारा स्वीकृत किया जाएगा।

विद्वानों में निहित परिप्रेक्ष्य में पीछे देखने पर, यह निष्कर्ष निकलता है कि, विद्वानों की इज्मा इस बारे में निष्कर्ष पर पहुंची।

दुर्भाग्य से, सर्वसहमत समझौते/सहमति बुद्धिजीवी वर्ग में कम ही होती है, और चूंकि सदैव विभिन्न मत रहे है, कोई भी उस विवाधक के समय के विभिन्न विद्वानों का पता सदैव लग सकता है।

इज्मा की परिभाषा भी, और कौन सी इज्मा को वैध माना जाएगा, इस आशय का एक बिंदु है। क्योंकि, इसमें केवल सभी पूर्व विधिवेत्ताओं का विवेक नहीं है। इज्मा की अवधारणा का उपयोग करने के अलावा भविष्य की समस्याओं को हल करने के लिए भूतकाल में देखना होता है, और पूर्व के वर्षों के विद्वानों को इन विवाधकों का सामना नहीं करना पड़ा, जो आज मुस्लिमों के समक्ष चुनौती बनकर खड़े हैं।

कयास

'दो वस्तुओं की आंशिक समानता का मेल'

इस्लामिक विधि का चौथा महत्वपूर्ण स्रोत है, जो "दो वस्तुओं की आंशिक समानता के मेल" की तर्कशक्ति पर आधारित है। एक जैसे मामलों में कयास को लागू करने में, इस्लामिक नियम का कारण या हेतुक स्पष्ट होना चाहिए।

उदाहरण के तौर पर, क्योंकि कुरान सकारण स्पष्टत: उल्लेख करती है कि अल्कोहल का उपयोग प्रतिबंधित है (क्योंकि यह इसके उपयोगकर्ता का उनके कृत्यों पर नियंत्रण कमजोर करती है) ऐसे में सामान प्रभाव डालने वाली 'स्वापक औषधियों' या के बारे में आंशिक समानता के आधार पर ऐसा ही निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए। किंतु, चूँकि दो वस्तुओं में आंशिक समानता के मेलों के बारे में विद्वानों के अभिमत में अत्यधिक अंतर है उदाहरण के लिए स्पेन के इब्ज़ हज़म (10 वीं शताब्दी) जो कि जाहिरी विचारधारा के विकट विरोधी थे, जिन्होंने कयास के प्रयोग को निरस्त किया है। जबकि, हनीफ़ी इमाम अबू हनीफा, (8वीं सदी) ने इसे विस्तार से लागू किया है। कयास या दो वस्तुओं की आंशिक समानता के आधार, उन समस्याओं के संदर्भ में, जिनके बारे में कुरान या पैगम्बर की सुन्ना में विशिष्ट प्रावधान नहीं है, आश्रय पाते हैं। ऐसे विवाद्यकों में विद्वानों में दो वस्तुओं की आंशिक समानता के मेल के संदर्भ में कुरान और सुन्ना में समान स्तिथि के आधार पर विधि विकसित की।

विद्वानों ने इस्लामिक न्याय शास्त्र की पुस्तकों में दो वस्तुओं में आंशिक समानता के मेल सम्बन्धी सिद्धांत या कयास में कटौती के विस्तृत सिंद्धांत विकसित किए।

'कयास', 'इज्तिहाद' का ही एक प्रकार है। पैगम्बर ने इज्तिहाद की अनुमति दी। इसका शाब्दिक अर्थ है 'प्रयास करना'। तकनीकी रूप से इसका अर्थ है कि एक विधिक विवाद्यक पर स्वत: निर्णय के दृष्टिकोण से, अपने अधिकार या प्रभाव का प्रयोग करना, (अर्थात प्रयास करना)। इज्तिहाद अल्लाह (SWT) की पुस्तक के सिद्धांतों और समस्याओं से निपटने की इस्लामिक प्रक्रिया है, जिसमें है 'क़ुरान' या पैगम्बर की परम्परायें- सुनना।

कयास के आलावा, इज्तिहाद की अन्य क्रियायें भी हैं जैसे –

'इस्तिहसन' (यह विभिन्न निर्वचनों से न्यायिक प्रमुखतः है); और 'मसलहा' (यह नैतिक विचार है।)

उपरोक्त स्त्रोतों के अतिरिक्त 'खुलफा-ए- रशीदुन' (इस्लाम के प्रथम चार शासक) के अभ्यास, न्यायाधीशों के निर्णय और जन रीतियां भी कई मामलों में इस्लामिक विधि के विचार स्त्रोत हैं। जिन्हें 'क़ुरान' और सुन्ना में नहीं कहा गया है।

सारांश- प्राथमिक स्त्रोत

फिर भी पैगम्बर की परम्पराओं को लेकर उनकी अधिकारिता पर प्रश्न उठाए गये हैं। इस पर भी विवाद रहा है कि परम्परायें किस सीमा तक धार्मिक रूप से आवश्यक हैं। दो वस्तुओं की आंशिक समानता के मेल के उपयोग पर बहुत बहस/ विवाद हुआ है। इस्लामिक विद्वानों के मध्य अस्पष्ट विवाद्यकों के बारे में सहमति भी कम ही है।

गौण स्त्रोत

1 उर्फ़ (रिवाज/ रूढ़ि/ प्रथायें/ तामुल)

रिवाज की इस्लामिक विधि में, स्त्रोत के रूप में मान्यता नहीं दी जाती, क्योंकि कई सारी प्रथाओं को 'सुन्ना' और 'इज्मा' के रूप में अलग मान्य कर दिया गया है।

अब्दुर्रहीम का कहना है कि- "मुस्लिम विधिक पद्धति का मूल आधार किसी अन्य विधिक पद्धति के समान ही उन लोगों के रिवाजों और आचारों में पाया जाता है जिनमें उनका विकास हुआ"।[9]

इस्लाम- पूर्व का अरब- समाज केवल प्रथाओं द्वारा ही नियंत्रित होता था। जब इस्लाम का आविर्भाव (उदय) हुआ तो पैगम्बर मोहम्मद साहब ने पाया कि लगभग सभी प्रथाएं अत्यंत विकृष्ट हैं। इसलिए उन्होंने अरब समाज में प्रचलित अधिकतर प्रथाओं को नकार दिया या इस्लाम के विरुद्ध घोषित कर दिया। परंतु इसके बावजूद भी कुछ अच्छी प्रथाओं का प्रचलन समाज में बना ही रहा जैसे कि मैहर, तलाक आदि और इन अच्छी प्रथाओं के प्रचलन पर पैगम्बर साहब ने रोक नहीं लगाई। ऐसी अच्छी प्रथाओं पर रोक न लगाने से यह माना गया कि पैगम्बर साहब ने उनका मौन समर्थन किया है।पैगम्बर साहब का मौन रह जाना उनका क्रियाकलाप मान कर सुन्नत-उल- तकरीर के रूप में उनका सुन्ना माना गया,अतः किसी प्रथा को 'प्रथा' के रूप में विधि का स्त्रोत नहीं माना गया वरन उनको सुन्ना के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। इसके अतिरिक्त कुछ प्रथाओं का आधार मानकर विधिशास्त्रिओं ने इज्मा के रूप में अपना मतैक्य निर्णय भी दिया है। ऐसी प्रथायें इज्मा के रूप में ही विधि के स्त्रोत मानी जाती हैं न कि 'प्रथा' होने के कारण। अतः यह कहा जा सकता है कि स्वतंत्र रूप से प्रथा इस्लाम विधि का कोई स्त्रोत नहीं है। कोई प्रथागत नियम इस्लाम विधि का स्त्रोत तभी माना जाएगा जब वह पैगम्बर साहब का सुन्ना रहा हो अथवा इज्मा में सम्मिलित कर लिया गया हो।[10]

अदालतों की दृष्टि में प्रथाओं का महत्व

यद्यपि प्रथाएं कोई स्वतंत्र स्त्रोत नहीं है तथापि इस्लामिक विधि के चार प्राथमिक स्त्रोतों कुरान, सुन्ना, इज्मा एवं कयास के पूरक के रूप में उनका उपयोग होता रहा है। उपरोक्त चार प्राथमिक स्त्रोत में कानून के जिन विषयों के में केवल मुख्य- मुख्य नियमों का ही उल्लेख है, उन्हें पूर्ण करने के लिए अदालतों ने समाज में प्रचलित प्रथाओं को नि:संकोच लागू किया।

इस्लाम विधि में प्रथा की वर्तमान स्थिति

[9] अहमद अकील, मुस्लिम विधि, (2012) पृष्ठ 15

[10] सिन्हा डॉ. आर. के., मुस्लिम विधि (2012) छठा संस्करण पृष्ठ 35

शरीयत अधिनियम के अनुसार- यदि किसी वाद में पक्षकार मुस्लिम है और वाद उत्तराधिकार, महिलाओं की विशिष्ट संपत्ति, विवाह, मैहर, तलाक, भरण पोषण, संरक्षणता दान वक्फ़ तथा न्यास से संबंधित है तो केवल मुस्लिम वैयक्तिक विधि ही लागू हो सकती है।

न्यायिक निर्णय

इस्लामिक विधि के स्रोत के रूप में पूर्व- निर्णय का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। क्योंकि लगभग सभी नियम मूल धार्मिक ग्रंथों में निहित हैं और अदालतों का उन्हें उसी रूप में लागू करना अनिवार्य है। फिर भी अदालतों ने मुस्लिम- विधि के किसी नियम के निर्वचन की प्रक्रिया में कुछ सर्वथा नवीन नियम प्रतिपादित कर दिए हैं।[11]

भारत में न्यायिक निर्णय की स्थिति

प्रिवी काउंसिल, उच्चतम न्यायालय और भारत के उच्च न्यायालयों के विनिश्चय आते हैं। वादों का विनिश्चय करने में न्यायमूर्ति विधि को प्राख्यापित करते हैं। ये विनिश्चय भविष्य के वादों के लिये दृष्टान्त समझे जाते हैं। दृष्टांत केवल विधि के साक्ष्य ही नहीं, बल्कि उनके स्रोत भी होते हैं और विधि के न्यायालय दृष्टान्तों का अनुसरण करने के लिए बाध्य होते हैं।[12]

वरिष्ठ न्यायालय का निर्णय उसके अधीनस्थ सभी न्यायालयों के लिए अनिवार्य मान्य होता है। इसे पूर्व निर्णय अर्थात नजीर का सिद्धांत कहते हैं। भारतीय अदालतें भी इसी सिद्धांत का पालन करती हैं। सर्वोच्च न्यायालय का किसी विषय पर दिया गया निर्णय भारतवर्ष की सभी अदालतों के लिए बाध्यकारी है। इसी प्रकार किसी उच्च न्यायालय का निर्णय उनके अधीनस्थ सभी अदालतों के लिए 'नजीर' के रूप में होता है। वरिष्ठ न्यायालय के निर्णय में यदि कोई विशिष्ट नियम प्रतिपादित हुआ है तो निचली अदालतों के लिए उस नियम का स्रोत वरिष्ठ न्यायालय का वह निर्णय ही माना जायेगा।

विधान

इस्लाम की सामान्य धारणा के अनुसार 'अल्लाह' ही सर्वोच्च विधिकार है तथा इसके अतिरिक्त अन्य को यह अधिकार नहीं प्राप्त है, अतः इस्लामिक विधि के लिए अधिनियम पारित करना इस्लामी मान्यताओं पर अतिक्रमण माना जा सकता है।

भारत में फिर भी मुस्लिम विधि के साथ-साथ कुछ संबंधित अधिनियम मौजूद हैं, उनमें पुरातन मुस्लिम विधि से अलग नियम बहुत कम है।

फिर भी निम्नलिखित अधिनियम उल्लेखनीय है[13]-

1 कौसौद ऋण अधिनियम

2 धार्मिक सहनशीलता अधिनियम

3 धर्म- स्वातंत्रय अधिनियम, 1850

4 मुसलमान वक्फ़ मान्यता अधिनियम,1913

5 चाइल्ड मैरिज एक्ट, 1929 (1978 के संशोधन सहित)

---

[11] सिन्हा डॉ. आर. के., मुस्लिम विधि (2012) छठा संस्करण पृष्ठ 36

[12] अहमद अकील, मुस्लिम विधि, (2012) अठ्ठाइसवाँ संस्करण पृष्ठ 16

[13] सिन्हा डॉ. आर. के., मुस्लिम विधि (2012) छठा संस्करण पृष्ठ

6 मुस्लिम पर्सनल लॉ शरीयत एप्लीकेशन एक्ट, 1937

7 डिजोल्युसन ऑफ मुस्लिम मैरिजेज एक्ट, 1939

8 मुस्लिम वीमेन (प्रोटेक्शन ऑफ़ राइट्स ऑन डाइवोर्स) एक्ट, 1986

9 तीन तलाक

उपसंहार

उपरोक्त शोध में अध्ययन को पश्चात यह पाया गया कि कुरान और सुन्ना को ही स्रोत के रूप में वरीयता प्राप्त है इसके बाद यदि काल और स्थान एवं परिस्थिति अनुसार दूसरे स्रोत को उठाया जाता है, रिवाज महज ऐसा स्रोत है जिसे बिना विवाद के जारी रखा जा सकता है और भारत की स्थिति को देखते हुए न्यायिक निर्णय एवं समय-समय पर जारी हुए कानूनों को भी मान्य किया जाएगा।